International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

हिंसा बनाम अहिंसा : मानव सभ्यता के शा"वत द्वन्द्व

डॉ0 राम कुमार सिंह

असि0प्रो0 (द"ार्न"ाास्त्र)

हे0न0बहु0राज0स्ना0महा0 नैनी, प्रयागराज

मानव सभ्यता यथार्थ और आद"ार्ा के जिन शा"वत द्वन्दो से होकर गुजरती है, उनमें हिंसा व अहिंसा का द्वन्द्व अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है। अपने विकास में उसने एक ओर प्रकृति व प्राणियों से अस्तित्व का संघर्ष कर उस पर विजय पायी है, वहीं उसने प्रेम, करूणा, साहार्द और बन्धुत्व के नैतिक आयाम भी विकसित किये है जिसके आधार पर मानव मानवीय गरिमा से युक्त हुआ है और उसकी मानवता एक आद"ार्ा के रूप में उभरी है। इसमें पहले पक्ष का प्रतिनिधित्व हिंसा व दूसरे पक्ष का प्रतिनिधित्व अहिंसा करता है। हिंसा प्राकृतिक है व अहिंसा मानवीय। गाँधीजी का तर्क है कि यदि वि"व में प्राकृतिक रूप से हिंसात्मक शक्तियों का बल अहिंसात्मक शक्तियों से अधिक होता तो यह सृष्टि अब तक चल नहीं सकती है। वि"व का अस्तित्ववान होना अहिंसा के प्रभुत्व"ाली होने का पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत करता है।

सृष्टि में अपने आगमन के साथ ही मानव को अस्तित्व के संघर्ष से जूझना पड़ा। अपनी प्राकृतिक अवस्था में मनुष्य जंगली व अर्द्ध पा"ाविक था किन्तु हिंसक व अहिंसक होने में मतभेद था। डर्विन व हाब्स जैसे विचारकों ने मनुष्य को प्राकृतिक अवस्था में हिंसक व स्वार्थी तथा लॉक व रूसो आदि ने शान्ति व सौहार्दपूर्ण बताया। यद्यपि प्रथम मत अधिक समीचीन प्रतीत होता है क्योंकि अपनी क्षमता के बल पर व अस्त्र–"ास्त्र के माध्यम से दुर्लभ भयंकर प्रकृति व हिंसक जन्तुओं से अपनी रक्षा की बल्कि अपनी क्षुधा भी पूर्ति की।

कालान्तर में मनुष्य ने हिंसा की जगह अहिंसा को अपनाना उचित समझा। उसका मानववादी दृष्टिकोण अब मानवतावादी बन गया। अस्तित्व के संकट के समाधान हेतु उसने सह–अस्तित्व की खोज की। प्र"न उठता है कि अहिंसा को आद"ार्ा रूप में स्वीकृति मिलने के बाद हिंसा में उत्तरोत्तर वृद्धि भी हुई तोइसके विभिन्न कारण दृष्टिगत होते हैं–

जीव वैज्ञानिकों के अनुसार, प्रकृति में सर्वत्र एक खाद्य श्रृंखला विद्यमान है। प्रत्यक्षतः भले ही यह श्रृंखला अस्तित्व पर संकट दिखती है किन्तु परोक्षतया सभी जीवों के अस्तित्व का आधार है। इस कारण मनुष्य की हिंसक प्रवृत्ति प्रकृतिप्रदत्त है। महाभारत में इस कथा को स्वीकार किया गया है।

न हि प"यामि जीवन्त लोके कि"चदहिंसया।
सत्त्वैः सत्त्वा हि जीवन्ति दुर्बलैवलवत्तरा।
नकुलो भूषिकानति विडालोनकुल स्तथा।
विडालमन्नि श्वा राजन श्वानं थाल मृगस्तथा।।

मनोवैज्ञानिकों ने भी इस मत का समर्थन किया है। रूसी वैज्ञानिक पावलोव ने अपने विभिन्न प्रयोगों के आधार पर यह सिद्ध किया है कि हिंसा एक ऐच्छिक किया मात्र नहीं है। हमारी

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

विभिन्न अन्तः स्रावी ग्रन्थियों से स्रावित हार्मोन हमारी क्रोध व हिंसक प्रवृत्तियों के कारण है।[1] लोकमत की यह अवधारणा काफी महत्वपूर्ण है कि जर–जोरू–जमीन के प्रति स्वत्व भाव ही हिंसा का था मूल कारण है। गीता में भी हमारी कामनाओं के अतृप्त रहना सभी दुर्वृत्तियों का मूल कारण माना गया है।[2] (न च श्रेयोऽनुप"यामि हत्वा स्वजनमाहव)

अनेक दा"ार्निकों व विचारकों ने हिंसा को मानव समाज के विकास का एक अनिवार्य अंग माना है और कुछ न आद"ार्ी मानवीय गुण माना।

जैसे नीत्से के अनुसार जीने का अर्थ है मरणोन्मुख तुच्छ एवं जीर्ण"ाीर्ण के प्रति करूणा रहित होना, निरन्तर हत्या करते रहना।[3] इसी तरह मार्क्स ने भी वर्ग विहीन और शोषण विहीन साम्यवादी समाज की स्थापना हेतु वर्ग संघर्ष को अनिवार्य बताया है और इस संघर्ष में हिंसा होती है तो सर्वथा उचित हैक्योंकि उचित साध्य के लिए प्रयुक्त कोई भी साधन सर्वथा उचित है। श्रमाधिपत्यवाद के प्रतिपादक फ्रांसीसी विचारक जार्ज यूरेन सरिल ने श्रमाधिपत्यावादी समाज की स्थापना हेतु सामान्य हड़ताल को सर्वथा उचित बताया ताकि पूँजीवादी व्यवस्था को पूर्णतः अवरूद्ध किया जा सके। इसमें हिंसा भी पूर्णतः उचित है। अपनी पुस्तक Reflection of Voilence तथा The Ethics of Voilence में उन्होंने हिंसक क्रान्ति की नीतिशास्त्रीय स्थापना की।[4]

इस प्रकार मार्क्स, एजेला, लेनिन, सारेल तथा अन्य समाजवादी विचारको द्वारा विकसित वामपक्षी विचारधारा में व्यापक प्रभाव दिखे। स्टालिन के नेतृत्व में रूस में, माओत्से तुंग के नेतृत्व में चीन में व्यापक हिंसा हुई। साम्यवाद के नाम पर आज भी हिंसा जारी है। वामपंथी के विपरीत दक्षिणपंथ ने भी जाति, धर्म व राष्ट्र के नाम पर व्यापक हिंसा करायी।

जैसे हिटलर ने अपनी पुस्तक Mein Kamph(मेरा संघर्ष) लिखा है – 'जिसे जीना है, उसे युद्ध करना होगा। जो इस संसार में युद्ध नहीं करना चाहता, उसे जीने का अधिकार नहीं है।[5] आद"ार्वाद के प्रबल समर्थक हीगल ने भी युद्ध का समर्थन किया। इस प्रकार वि"व में व्यापक हिंसा किसी न किसी रूप में परिलक्षित होती है। संक्षेप में इसे तीन वर्गों में बांटा जा सकता है–

1. दक्षिणपन्थी हिंसा–जाति, धर्म और राष्ट्र के नाम पर
2. वामपन्थी हिंसा – वर्गविहीन, साम्यवादी समाज के नाम पर
3. अन्य हिंसा – 1) मनोविकृति जन्य 2) पे"ोवर 3) अन्याय, शोषण और हिंसा के विरूद्ध प्रतिहिंसा।

यहाँ यह प्र"न उठना स्वाभाविक है कि क्या हिंसा को औचित्य पूर्ण माना जा सकता है? प्रत्येक विकसित धर्म, प्रबुद्ध समाज व विवेक"ाील व्यक्ति ने किसी न किसी रूप में हिंसा का विरोध ही किया है और जिन विचारकों ने इसका समर्थन किया है, केवल साधन रूप में ही नि"चय ही साध्य रूप में हिंसा का समर्थन कथमपि सम्भव नहीं है। साध्य के रूप में सिर्फ अहिंसा ही स्वयं मूल हो सकती है।

इस प्रकार हिंसा व अहिंसा क्रम"ाः साधन व साध्य रूप में है। हिंसा के विपरीत अहिंसा का सम्बन्ध केवल जैविक जगत तक है अतः निर्जीव वस्तु हेतु यह निरर्थक है। अहिंसा नैतिक अवधारणा है, नैतिकता का सम्बन्ध केवल मानव जगत तक है अन्य प्राणियों हेतु इसका प्र"न

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

उठाना भी बड़ी सीमा तक असंगत हो जाता है। यह एक सापेक्षिक अवधारणा भी है क्योंकि व्यावहारिक रूप में हम प्रायः कुछ सीमाओं या क्षेत्रों तक ही अहिंसा अपनाते हैं। इन तीनो वि"ोषताओं के बाद अहिंसा के सन्दर्भ में जिन तीन अन्य आयामों की चर्चा होती है वह है– कायिक, वाचिक व मानसिक। अहिंसा का सर्वप्रथम व सर्वप्रमुख वि"ोषता यह है कि हम अपने कार्यो, काया द्वारा किसी की हिंसा न करें। किन्तु यह न तो पर्याप्त और न ही उचित। अहिंसा के परम समर्थकों ने इसे वचन व चिन्तन दोनो स्तरों पर अपनाने का आद"ार माना है अर्थात हम अपने वाणी व विचार का हिस्सा हिंसा को न बनने दे अर्थात किसी को न अनुचित बोलकर नही उसके विषय में अनुचित सोचकर।

अहिंसा की सापेक्षिता से जुड़ा एक अन्य पहलू है अहिंसा की श्रेणीबद्धता। यदि हिंसा का तात्पर्य जीवन का समूल ना"ा नहीं तथा दुःख या उत्पीड़न को भी हिंसा माना जाय तो अहिंसा में भी श्रेणीबद्धता करनी होगी। हिंसा या अहिंसा को सापोनक्रम में कहाँ रखे यह इस बात पर निर्भर करता है कि हिंसा का मूल मानक संत्रांस को मानते है या जीवन ना"ा। पीडा देना हिंसा की प्रमुख वि"ोषता है किन्तु वह न तो आव"यक वि"ोषता बन सकती है और न ही व्यावर्तक। प्र"न यह उठता है कि मानसिक सतर पर हुई हिंसा को हिंसा माना जाय या नहीं। विधि या न्याय"ाास्त्र में भी किसी कार्य या रिष्टि के अपराध होने हेतु वैसी मनःस्थिति आव"यक है और उसके बिना परिस्थिति (Actus Rens) को अपराध नहीं माना गया है किन्तु वहाँ बिना व्यवहारिक परिणति के मात्र विचार को अपराध नहीं माना गया है।

विधि के इतर द"ार्न का क्षेत्र व्यवहारिक समस्याओं से बाधित नही होता। वह जानता है कि तथ्यों से मूल निगमित करना भले ही कठिन हो किन्तु मूल्यों से तथ्यों को प्रभावित करना सरल है। हिंसा शरीर से पूर्व मन के तल पर घटित होती है। फिर वाणी में प्रकट होती है। विचारों में प्रादुर्भूत पहले होती है वह हिंसित को प्रभावित बाद में करती है। इस प्रकार मानसिक अहिंसा के बिना वास्तविक अहिंसा की ओर अग्रसर नहीं हुआ जा सकता है।

प्र"न उठता है कि अहिंसा एक आद"ार कब बनाकर रोचकता यह है कि अहिंसक युग में अहिंसा स्वयं तथ्य होती है अतः उसे आद"ार बनने की आव"यकता है नहीं। अहिंसा मूल तब बनती है जब हिंसा एक तथ्य बन जाये। किसी व्यक्ति जीव या समुदाय की अहिंसा किसी दूसरे व्यक्ति जीव व समुदाय के लिए उनकी आसान हिंसा का प्रलोभन भले ही बन जाये किन्तु वह हिंसा का आद"ार बनने की प्रेरणा नहीं दे सकता। हिंसा की विडम्बना ही यही है कि वह अपने समय में अहिंसा को आद"ार बना देती है और यह परम स्तर पर स्वयं आत्मघाती हो जाती है। संसार में अहिंसक धर्म–द"ार्न का जब प्रभुत्व हुआ, तब धर्म, समाज और राज्य–तीनो ही सर्वाधिक नहीं किन्तु पर्याप्त हिंसाग्रस्त थे।

यदि हम वि"वस्तर पर अहिंसा के दो ि"ाखर प्रतिष्ठाताओं महावीर एवं बुद्ध को देखे तो वे एक साथ धार्मिक हिंसा (बलि प्रथा), सामाजिक हिंसा (दासो, शूद्रो, स्त्रियों के प्रति हिंसा का विभेद) तथा राजकीय (युद्ध, दमन–"ार्षक)–तीनो के विरूद्ध अहिंसा के द"ार्न की प्रतिष्ठा कर रहे थे।

महावीर और बुद्ध भी या तो पुरातन परम्परा के वाहक है या फिर उसकी प्रतिक्रया। बुद्ध का अहिंसा मार्ग न तो बहुत मौलिक है, न बहुत अतिवादी, न ही बहुत प्रभावी, किन्तु महावीर तो इसके ि"ाखर थे। महावीर स्वयं को वैदिक काल के ऋषभदेव से जोड़ते है जो कि ऋषि के

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

बजाय मुनि थे। वैदिक परम्परा ऋषि व मुनि परम्परा का मिलन है किन्तु मुख्यतः ऋषि परम्परा की है जहाँ न तो मुनि परम्परा जैसा वैराग्य भाव है और न कोई सर्वव्यापक व परम अहिंसा भाव। वस्तुतः वैदिक संस्कृति – हिंसा व अहिंसा, प्रेम न घृणा, ऋत व माया आदि इन सबका मिश्रण है। वैदिक द"ान में भी अहिंसा का बाहुल्य है कई स्थानों पर प्राणी हिंसा तो दूर वनस्पतियों की भी हिंसा का निषेध किया गया है, किन्तु यदि वैदिक संस्कृति को हिंसक मान भी ले तो यह न उसकी केन्द्रीय सामाजिक धारा है न ही प्रभावी सैद्धान्तिक विचार। यदि वैदिक संस्कृति को बहुत प्राचीन नहीं केवल तीन चार हजार वर्ष पूर्व का माने तो आज तक संसार में अहिंसा को किसी अन्य धर्म में वह प्रतिष्ठा नहीं मिली जो हिन्दू धर्म और उसकी व्युत्पन्न शाखाओं के रूप में विद्यमान जैन–बौद्ध धर्मों में मिली, वे चाहे अरब और यूनान में फेले यहूदी, इसाई व इस्लाम धर्म हो या चीन में विकसित कन्फ्यू"ायस व ताओ धर्म, सत्यता यह है कि वैदिकों की एक शाखा के रूप में प्रतिष्ठित पारसी धर्म में भी अहिंसा की वह प्रतिष्ठा नही है।

वास्तविकता यह है कि संसार के समस्त विकसित धर्म मुख्यतः दो मूल धर्मो–हिन्दू तथा यहूदी धर्म के ही प्रवाह व सूत्रधार है। यहूदी धर्म का ग्रन्थ ओल टेस्टामेण्ट बड़ी सीमा तक बलि व प्रति"ोध की भावनाओं का पोषक है क्योंकि वहां उस संस्कृति में उसी की प्रतिष्ठा थी। जीसस ने इसमें सुधार कर प्रेम का धर्म बनाया किन्तु उन्होंने जीव हिंसा को स्वीकार किया यद्यपि इसे धार्मिक विधान नहीं बनाया। इस्लाम ने पुनः यहूदी धर्म की ओर पुरावर्तन कर जेहाद व कुर्वानिया के रूप में अहिंसा के सामान्य आद"ा के प्रतिकूल अवधारणाओं की प्रतिष्ठा कर दी। इस्लाम जिसका मूल अर्थ शान्ति था, इन्हीं अवधारणाओं से ढक कर खो गया।

हिन्दू धर्म की अहिंसा के सम्बन्ध में सामान्य सी मान्यता है यह जिस उर्वर भूमि पर पनपी उनसे आहार संग्राहक या कृषक बनकर अहिंसक व शाकाहारी होना सरल था, किन्तु यहूदी परम्परा जिस बंजर क्षेत्र में जन्मी वहां आखेटक व प"ुपालक रूप में हिंसक व मांसाहारी बन जाना प्राकृतिक विव"ाता थी। किन्तु यह अर्धसत्य है क्योंकि हजारो वर्ष पूर्व ईरान, इजराइल और जार्डन का क्षेत्र इतना उर्ववास्था कि उसे 'चन्द्रभूमि' कहा जाता था। इस प्रकार अहिंसा प्राकृतिक विव"ाता के साथ वैयक्तिक व सामाजिक अवधारणा की थी।

हिन्दू संस्कृति ने जिस अहिंसावादी सिद्धान्त को जन्म दिया, उसे जैन परम्परा ने चरम रूप दिया तथा महावीर उसके सर्वोच्च ि"ाखर है। उन्होंने सूक्ष्म जीवों और तृणादि वनस्पतियों तक की हिंसा का निषेध कर दिया। इस दृष्टि से संसार का कोई अन्य धर्म उसके समकक्ष नही खड़ा हो सकता।

किन्तु महावीर की दे"ाना अतिवादी मानी जा सकती है। वैदिक संस्कृति के पतन काल में यज्ञीय हिंसा ने जितना गर्हित रूप धारण किया इसकी प्रतिक्रिया आव"यक थी और उसका दूसरी अति पर भी पहुँच जाना स्वाभाविक था। बुद्ध ने दोनो के मध्य मध्यमार्ग अपनाया। उन्होंने पंच"ाील में अहिंसा को स्थान तो दिया किन्तु उनका बल मुख्यतः तत्वमीमांसीय मिथको के निषेध और सामाजिक विभेद के निराकरण पर था। उन्होंने दे"ाना दी कि भोजन के लिए जीव हिंसा अनुचित है किन्तु यदि किसी अन्य के द्वारा जीव हिंसा की गयी हो जिसमें उसे निमित्त न माना गया हो, तो वह आहार लिया जा सकता है। बुद्ध ने ऋषि

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

परम्परा की आहार सग्राहक स्वावलम्बी व्यवस्था के विपरीत भिक्षुवृत्ति परक समाजजीवी व्यवस्था का प्रणयन किया। यही अनुमति बौद्ध दे"ाों के जीव हिंसक के जघन्यतम व्यापकतम रूप की अनुमति दी।

इन दोनो धर्मों के अतिरिक्त हिन्दू धर्म से पृथक हुए सिख धर्म भी है जो प्रथम गुरूनानक के काल में पूर्ण अहिंसावादी स्वरूप के साथ उदय हुआ किन्तु मुगलों को प्रतिक्रया में बड़ी सीमा तक हिंसा को स्वीकार करता रहा अंतिम गुरू गोविन्द सिंह तक आते आते आत्मरक्षार्थ व धर्मरक्षार्थ हिंसा को पूर्ण स्वीकृति दे दी।

यहाँ हिन्दू धर्म के एक सम्प्रदाय वि"नोई धर्म का उल्लेख समीचीन है। क्योंकि उसने वन्य प"ाुओ (मृगो) तथा वृक्षों (खेजड़ी या शमी) की रक्षा की संस्कृति विकसित की।

भारतीय धर्म द"ानों में ईसाई मत के अन्तर्गत जीसस द्वारा पर्वतोपदे"ा के रूप में शत्रु प्रेम का जो द"ान दिया वह अहिंसा के सामजिक राजनैतिक स्वरूप का आधार बना यह बुद्ध के मैत्री व करूणा सिद्धान्त के अनुरूप था। चीनी द"ानों में कन्फ्यू"ायस व ताओ का वि"ाेष नाम है जिसमें ताओ धर्म मुख्यतः प्रकृतिवादी व अहिंसावादी है।

इस प्रकार अहिंसा ने भारतीय धर्म से अधिक भारतीय संस्कृति में स्थान पाया। जैन व महावीर बुद्ध के बाद अहिंसा के द"ान को भारत में ही नहीं बल्कि वि"व में प्रतिष्ठित करने वाले महात्मा गांधी है। गाँधी के अनुसार, ''अहिसा प्राणवायु के समान है। उनके शब्दों ने मेरे लिए अहिसा केवल एक दा"ानिक सिद्धान्त नहीं है। वह मेरे जीवन का ताना बाना है''।[6] पुनः वे लिखते हुए है कि यह वह सिद्धान्त है जिसके लिए मैं जीवित रहता हूँ, जिसके लिए मैं जीवित रहना चाहता हूँ, और जिसके लिए मेरा वि"वास है कि मैं मरने के लिए भी तैयार हूँ''।[7] वि"व स्तर पर जिन भी अहिंसावादियों का नाम आता है, उन पर गांधी की स्पष्ट छाप है चाहे वह एल्बर्ट आइंसटीन हो, मार्टिन लूथर किंग हो, नेल्सन मण्डेला या ढलाई लामा हो। इतना ही नहीं गांधी के पूर्व लियो थलस्टाय, जॉन रस्किन और थेरो जैसे लोगो ने वैचारिक व राजनैतिक–स्तर पर इसका समर्थन किया है। गांधी के प"चात् अहिंसावादियों की सुदीर्घ परम्परा है। जिसके टॉमस लेनर तथा राबर्ट हयूरोज ने अपने आलेख 'Non Violence: An Introduction'[8] में अहिंसा को मुख्यतः दो आधारो पर विभक्त करते हुए चार आयाम बताए हैं–

टॉमस लेवर व राबर्ट हयूरोज ने अपने लेख के वि"लेषण में साध्य–साधन विवाद प्रस्तुत करते हुए यह माना है कि आद"ा में भले ही साधन की शुद्धता सम्भव हो किन्तु व्यवहार में सम्भव नहीं। उन्होंने गांधी को मान...नकर मूल गांधीजी ने स्वयं को व्यवहारिक आद"ावादी माना था और उन...हारिकता दिखाने वाले भी नगण्य है।

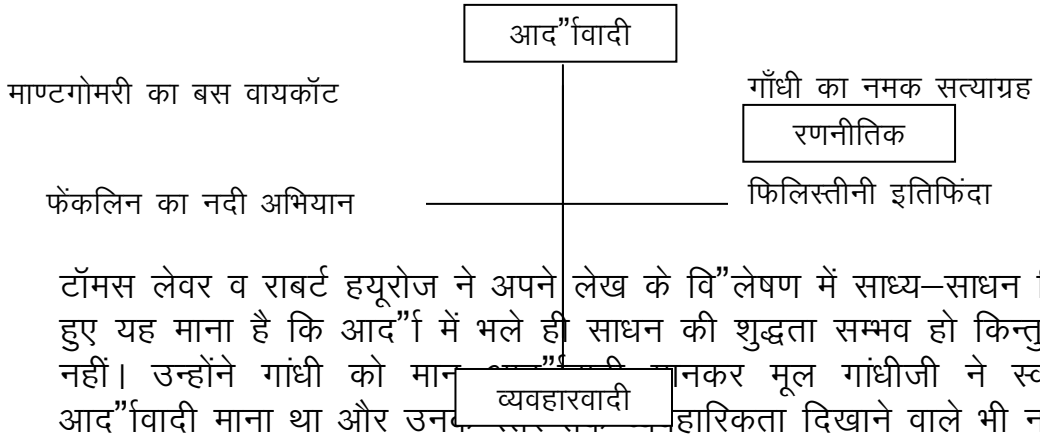

इस प्रकार हिंसा व अहिंसा मानव सभ्यता के शा"वत द्वन्द्ववत है। दोनो मतो के समर्थक

International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 10 Issue 7, July- 2020
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 7.101 |

अपने–अपने समर्थन में अपनी व्यवहारिक सफलता का दावा करते हैं। भारत में स्वतन्त्रता में गांधी के अहिंसक आन्दोलन की भूमिका रूस में या चीन में साम्यवाद के लिए हिंसक क्रान्ति के योगदान से कथयपि कम नहीं है। किन्तु अनेक आलोचको का यह कहना है कि भारत भी स्वतन्त्रता में केवल सत्याग्रह, असहयोग व सविनय अवज्ञा को पूर्ण श्रेय देना भारत के समग्र संघर्ष की अवहेलना करना है। नेहरू ने अपने शब्दों में सन्देह व्यक्त किया है ये निश्चित लाभ अहिंसा के बदौलत हुए है या पूर्ण संघर्ष के बदौलत।[9] वास्तव में हिंसा व अहिंसा का निरपेक्ष मूल्यांकन नहीं हो सकता। प्रसंग व परिस्थिति के अनुसार इसमें से कोई भी स्थिति बेहतर हो सकती है।[10] किन्तु इन दोनों का नैतिक मूल्य उसमें निहित भावनाओं पर आधारित होता है। भावनाओं के आधार पर अहिंसा श्रेष्ठ मानी जा सकती है क्योंकि वह सामान्यतः सद्भावयुक्त होती है किन्तु यह भी आवश्यक नहीं कि हिंसा अनिवार्यतः दुर्भावयुक्त होती है यद्यपि यह प्रायः दुर्भावयुक्त ही होती है। डॉक्टर द्वारा किया गया आपरेशन हिंसात्मक होने के कारण सद्भावयुक्त होने के कारण युक्ति युक्त माना जाता है।

सन्दर्भ ग्रन्थः–

1. Ivan Petrovich Pavlov: The work of Digestive glands Page No. 264
2. श्रीमद्भगवदगीता 1,31
3. Friedrich Nietzsche: Human All too Human 1878 Page 62
4. Jeorge Urain Saril: Reflection of Voilence & The Ethics of Voilence
5. Adolf Hitler: Mein Kampf
6. Mahatama Gandhi: Gandhi on Nonvoilence Page 28
7. Mahatama Gandhi: The Power of Non Voilence Resistence essential letters
8. Thomas Labour & Robert Hurose: Non Voilence: An Introduction
9. J.L. Nehru: Glimpses of world HistoryPage No. 89
10. के0के0 पाठकः सामाजिक एवं राजनैतिक दर्शन